IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

जातीय तनाव के बदलते स्वरूपों का अध्ययन

Smita Kumari

Research Scholar

University Department of Sociology

Lalit Naryan Mithila University, Darbhanga

Abstract: **जाति संस्था का विश्लेषण समाजविज्ञान में दो दृष्टियों से किया गया। प्रकार्यात्मक एवं दुष्प्रकार्यात्मक विश्लेषण। प्रकार्यात्मक दृष्टि से जाति सामाजिक युग्मन की संरचना (इन्टीग्रेटिव मैकेनिज्म) है। सामाजिक संस्तरण के प्रकार्यात्मक विश्लेषण-लेन्सकीए मिल्सए डेविस एवं मूरेए ट्यूमिन आदि समाज वैज्ञानिकों की मान्यताओं की पृष्ठभूमि में जाति का प्रकार्यात्मक स्वरूपए सामाजिक श्रेणीक्रम की संरचना में जातिगत प्रकायों का विभाजनए श्रम विभाजन के माध्यम से सामाजिक व्यवस्था के निर्माण में जाति व्यवस्था को प्रमुख आधारशिला एकता एवं सहयोग पर आधारित एवं संघर्षहीन संस्था के रूप में स्वीकारा गया।**

Index Terms - सामाजिकए संस्थाए जाति

परिचय

जाति वैयक्तिक एवं सामाजिक दोनों स्तरों पर फन्कशनल हैं। दूसरी ओर वैरमेनए वाट्सनए स्मिथए वैनेडिक्ट आदि समाज वैज्ञानिकों ने जाति की पारम्परिक सहयोग पर आधारित संगठन के रूप में न विपति कर विशिष्ट समूह में शक्ति के केन्द्रीकरण की व्यवस्था के रूप में विश्लेषित किया था। उनकी दृष्टि में जाति बहुत सांस्कृतिक समूहों के निर्माण के माध्यम से विशिष्टए शक्तिए अवसर एवं विशेषाधिकार के संरक्षण की व्यवस्था करती है जिसके अंतर्गत अधिकारविहीन जातीय समूह एवं शक्ति सम्पन्न जातीय समूहए इसके सदस्यों में जातिगत एकता एवं सहयोग की प्रक्रिया की बजायए तनाव एवं संघर्ष की प्रक्रिया परिलक्षित होती है।

अध्ययन का परिप्रेक्ष्य एवं मुद्दा :

समाज में तनावए धुरिये के मतानुसारए तब उत्पन्न होता है जब किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के समूहों द्वारा सामाजिक प्रस्थितिक्रम में परिवर्तन की इच्छा उत्पन्न होती है। भार्गेनथाऊ के स्वीकृत निष्कर्षों के आधार पर यह विश्लेषित किया जा सकता है कि परिस्थिति क्रम को यथास्थिति में बनाये रखने तथा दूसरी ओर परिवर्तन की मांग वाले जनसपचख्यात्मक समूहों में प्रतिरोध के परिणामस्वरूप समाज संघर्ष से पूर्व अथवा संघर्षात्मक स्थिति में प्रविष्ट हो जाता है।

स्वतंत्र भारत में जातीय संस्तरण पर आधारित हिन्दू सामाजिक व्यवस्था के प्रतिरोध में हिन्दू दलित एवं अस्पृश्य जातियों ने अम्बेडकर ने नेतृत्व में नव बौद्ध धर्मान्तरण किया जिसके अंतर्गत जाति विहिन सामाजिक संरचना का आयाम प्रस्तुत किया गया। जातिगत तनाव पर निर्मित सामाजिक परिस्थितियों को पुनःसंरचित करने की दिशा में अस्पृश्य जाति फेडरेशन की विरासत पर 1950 में अम्बेडकर के ही नेतृत्व में श्अखिल भारतीय रिपब्लिकन पार्टीश का निर्माण हुआ। इस नवीन राजनीतिक दल का अभ्युदय राबर्ट लिंच की दृष्टि में जातवए महार एवं अन्य अस्पृश्य जातियों के लिए उस राजनीतिक व्यवस्था का अभियोजित प्रतिफल था जिसके अंतर्गत उनके हितों को उनकी इच्छा के स्तर तक नहीं सम्मिलित किया गया था। संरचनात्मक दृष्टि से रिपब्लिकन पार्टी एवं नव बौद्ध आंदोलन दोनों सहयोगात्मक संबंधों पर आधारित था क्योंकि रिपब्लिकन पार्टी के माध्यम से जहाँ अस्पृश्य जातियों की आर्थिकए राजनीतिक एवं सामाजिक नियति से संबंध सामान्य पहलुओं पर बल दिया गया

वहीं नव बौद्ध आंदोलन के माध्यम से जाति विहीन सामाजिक संरचना से संबद्ध गोपनीय पहलुओं पर बल दिया गया।

अस्पृश्य जातियों को सामाजिकए आर्थिक निर्योग्यताओं को समाप्त करने की संवैधानिक व्यवस्थाए अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम 1955ए नागरिक अधिकार संरक्षण कानून 1976ए सामाजिक पुनर्निर्माण की नीति में अस्पृश्य एवं अनुसूचित जातियों के वैधानिक संरक्षण के प्रयासों के आधार पर जहाँ एक ओर उनकी वर्गीय प्रस्थिति को अरोही गतिशील बनाने का क्रम जारी है वहीं दूसरी ओर संरक्षण के विरुद्ध व्यापक आंदोलनों के आधार अनुसूचित जातियों बनाम सवर्ण जातियों में तनाव संघर्ष की प्रत्यक्षतः परिलक्षित किया जा सकता है। बिहारए उत्तर प्रदेशए गुजरात एवं अन्य राज्यों में अस्पृश्यों जातियों को नौकरी से लेकर शिक्षण संस्थानों में प्रवेश हेतु मिलने वाले संरक्षण के विरुद्ध होने वाले उपद्रव व आंदोलन जातीय तनाव व संघर्ष की अभिव्यक्ति करते है। मूलतः वे आंदोलन संरक्षण के विरुद्ध अधिक परिलक्षित होते है। भारत में 1978.79 के बीच विभिन्न राज्यों में 5000 से भी अधिक संघर्ष अनुसूचितए पिछड़ी एवं सवर्ण जातियसों में हुए जिसमें 2300 मामलों की रिपोर्ट अस्पृश्यता अपराध अधिनियम के अंतर्गत की गयी किंतु 25 से अधिक मामलों में दण्ड नहीं दिए जा सके। 1979.80 में 2425 मामलों को अस्पृश्यता अधिनियम के अंतर्गत दर्ज किया गया। ये आँकड़े भारत में सवर्ण एवं अस्पृश्य जातियों में तनाव एवं संघर्ष की उत्तरोत्तर वृद्धि को प्रदर्शित करते है। पारसबीधाए पिपराए बेलछी एवं कुफल्टा जैसी हरिजन अत्याचार की घटनाएँ जातीय संघर्ष के भीषण एवं उग्र दुष्परिणामों को प्रदर्शित करती है।

ज्ञान के क्षेत्र में योगदान :

भारत में मौजूदा जातीय तनाव एवं संघर्ष का विश्लेषण संरचनात्मक प्रकार्यात्मक दृष्टि से दो आयामों- सामाजिक गतिशीलता के संरचनात्मक स्वरूप में परिवर्तन तथा जातिगत प्रकार्यों में परिवर्तन के आधार पर किया जा सकता है। सामाजिक गतिशीलता का सामाजिक संरचना पर पड़ने वालों प्रभाव दो प्रकार का हो सकता है।

1ण सामाजिक गतिशीलता की संभावना विभिन्न अवसरों की उपलब्धि से संबंधित विश्वघात बनाए रखता है जिसका समाज एवं राजनीति पर संगठनात्मक प्रभाव पड़ता है।

2ण सामाजिक गतिशीलता के असमान अवसर विशिष्ट परिस्थिति में सामाजिक स्थायित्व पर विघटनात्मक प्रभाव उत्पन्न करते है।

स्वतंत्र भारत के 50 वर्षों से अधिक काल तक किए गए व्यावहारिक अध्ययनों से प्राप्त निष्कर्ष प्रतिपादित करते है कि भारतीय समाज में परंपरागत स्वरूप-देशप्रेमए संस्कृति एवं सामाजिक विविधता की प्रवृत्ति स्थायी नहींए अपितु लचीली है तथा उनमें परिवर्तन परिलिक्षित होता है। यह परिवर्तन सामाजिक गतिशीलताए प्रस्थिति प्रतिस्पर्धा एवं संस्कृतिकरण के रूप में विश्लेषित किया गया। भारत में जाति श्रेणीक्रम की स्थापनाओं के अंतर्गत सामाजिक गतिशीलता का अवसर प्रमुखतः द्विज जाति को उपलब्ध था। शिक्षाए सरकारी सेवाओं एवं अन्य गतिशीलता के अवसरों पर द्विज जाति की अनुवांशिक प्रतिस्थति का एकाधिकार परंपरागत तौर पर जारी रहा। सामाजिक गतिशीलता का समासमायिक स्वरूप जिसके अंतर्गत अनुसूचित जाति को वैधानिक संरक्षणों के माध्यम से गतिशीलता के अवसरों को उपलब्ध करने की स्वीकृति मिली हैए कि द्विज जाति को अपने एकाधिकार में हस्तक्षेप के रूप में प्रतीत होता है। अनुसूचित जाति की गतिशीलता की विशिष्ट अवसर सवर्ण जातियों को खतरे के रूप में दिखाई पड़ता है।

परिणामतः सामाजिक स्वस्थ्य जिसके अंतर्गत अनुसूचित जाति को वैधानिक संरक्षणों के माध्यम से गतिशीलता के अवसरों को उपलब्ध करने की स्वीकृति मिली है द्विज जाति को अपने एकाधिकार में हस्तक्षेप के रूप में प्रतीत होता है। अनुसूचित जाति की गतिशीलता की विशिष्ट अवसर सवर्ण जातियों को खतरे के रूप में दिखाई पड़ता है। परिणामतः सामाजिक स्थायित्व पर यह गतिशीलता विघटनात्मक परिणाम उत्पन्न करती है। गुजरात एवं बिहार का संरक्षण विरोधी आंदोलन इस परिप्रेक्ष्य में जहाँ एक ओर उच्च जातियों की (जड़ जमाई हुई) जातीय पूर्वाग्रह से संबंध हैए वहीं दूसरी ओर स्त्रोताभाव एवं सीमित रोजगार के अवसरों पर निम्न जाति की सामाजिक गतिशीलता के परिवर्तित स्वरूप से संबंधित है।

अध्ययन का उद्देश्य :

इस परिप्रेक्ष्य में भारत में जातिगत तनाव असामान्य नहीं अपितु सामान्य . है। जातिगत तनाव एवं संघर्ष का इतिहास अर्वाचिन भारत में ही नहीं परिलक्षित होता बल्कि प्राचीन भारत में भी इसकी अभिव्यक्ति मिलती है। ईसा पूर्व 6वीं शताब्दी में जैन एवं बौद्ध धर्म का प्रवर्तन भारत में जातीय संस्तरण के दष्प्रकार्यों की परिणति विशेषकर द्विज जाति बनाम निम्न जाति में तनाव की नींव पर आधारित था। इसाई धर्म का प्रवर्तनए इस्लाम जो 11वीं शताब्दी से मुगल काल तक भारत का प्रमुख धर्म बना। इन धार्मिक संप्रदायों का मूल आग्रह हिन्दू सामाजिक व्यवस्था के जातीय संस्तरण से विमुक्तिकरण करना था। 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध में

विभिन्न समाज सुधार आंदोलन ब्रहम समाज एवं आर्य समाज के माध्यम से जातीय तनावों के मिटाने की दिशा में पुनर्जागरण आंदोलन के रूप में प्रयास किए गए।

जातीय तनाव एवं संघर्ष का अवलोकन 1870 में ज्योति राव फले के नेतृत्व में महाराष्ट्र में ब्राहमण के विरुद्ध मध्य जातियों के आंदोलन अस्पृश्य महार जाति के विमुक्ति आंदोलन के माध्यम से किया जा सकता है। 1920 में अम्बेडकर के नेतृत्व में ३अखिल भारतीय दलित वर्ग संघ३ तथा ३अखिल भारतीय दलित वर्ग फेडरेशन की रथापनाए 1932 में महात्मा गाँधी के सहयोग से ३हरिजन सेवा संघ३ की स्थापना आदि तथ्य भारतीय समाज में जातीय तनाव की उपस्थिति के क्रमबद्ध ऐतिहासिक साक्ष्य प्रस्तुत कराते है। अम्बेडकर ने कहाँ एक ओर संघों की स्थापना के माध्यम से अस्पृश्य जातियों को धार्मिक एवं सामाजिक अधिकारों को प्रदान करने का प्रयास कियाए वहीं दूसरी ओर गांधी में जातीय समन्वय के सम्प्रदाय के अंतर्गत अस्पृश्यता निवारण का प्रयास किया।

उपकल्पना :

वर्तमान जातीय तनाव एवं संघर्ष के विश्लेषण का दूसरा आयाम है जातिगत प्रकार्यों में परिवर्तन। जहाँ एक ओर जाति के संस्थागत प्रकार्यों में हास हो रहा है वहीं दूसरी ओर जाति के संगठनात्मक प्रकार्यों में वृद्धि हो रही है। खान–पानए सन्दर्भ एवं वैवाहिक संबंधों के आधार पर जातिगत प्रतिबंध बने हुए है। जाति संस्कारों एवं बंधनों के अधिकांश बंधन शिक्षित हुए है। किन्तु दूसरी ओर शक्ति द्वन्द्व के संदर्भ में जाति प्रमुख आधार बन गयी है। अखिल भारतीय स्तर पर जातीय संगठनों का विकास हुआ है। जाति के इस संगठनात्मक प्रकार्य में परिवर्तन के परिणामस्वरूप इसके माध्यम से सामूहिकता के बीच को ही प्रश्रय मिलता है। यही कारण है कि चुनाव लेकर नौकरी तक एवं अन्य अवसरों पर जाति एक समस्या के रूप में उभरा है।

जाति का यह प्रकार्य परिवर्तन समजाति के संगठनात्मक प्रकार्य एवं सामाजिक गतिशीलता के परिवर्तित स्वरूप के संबंध है। समसामयिक हरिजन धर्मान्तरण की प्रक्रिया। आर्थिक एवं राजनीतिक दृष्टि से धर्म परिवर्तन की घटनाएँ मुद्रा एवं भौतिक प्रलोभनए शैक्षणिक सुविधाएँ एवं रोजगार के अवसर प्रलोभनए शक्ति द्वन्द्व के संगठन की परिणति के रूप में विश्लेषित किया जा सकता हैए किंतु समाज वैज्ञानिक दृष्टिकोण से धर्मान्तरण की प्रक्रिया से संबंध एक्सादेरिक एवं एसाटेरिक पहलुओं का विश्लेषण आवश्यक है जिसके मूल में है जाति श्रेणीक्रम में भिन्न जाति को सामाजिक–आर्थिक नियति का विश्लेषणए जातीय संस्तरण के अंतर्निहित जातिगत तनाव का विश्लेषण एवं अंततः इस परिप्रेक्ष्य में भारत में विकासए सामाजिक न्याय एवं परिवर्तन का विश्लेषण ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- ।दकतं ठमजमपससमए ब्ंजमए ब्सें ंदक च्वूमत रू बिंदहपदह च्ंजजमतदे वि ेजंतजपपिबंजपवद पद ं ंदरवतम टपससंहमए न्दपअमतेपजल वि ब्ंसपवितदपं च्तमेए 1965 च्च्च् 10
- डण् छण् ेतपदपअेंए ेवबपंस बिंदहमे पद डवकमतद प्दकपंए स्वे ।दहमसमेए ब्ंसपवितदपंए 1966ए च्च् 10
- ल्वहमदकतं ेपदहीए ेवबपंस ेजंतजपपिबंजपवद ंदक बींदहम पद प्दकपंए 2दक तमअपेमक मकपजपवदण् डंदवींतए 1997ण् च्हण् 25
- ळवअपदक ेकौपअ ळीनतलम ब्ंजम ंदक बसें पद प्दकपंण् च्वचनसंत ठववा क्मचवजण् डनउइंपए 1957 च्हण् 12
- स्नपे क्मनउवए भ्वउम भ्पमतबीनेए डंबउपससंदए स्वदकवदए 1969 च्च् 45